स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी उपन्यास और भीष्म साहनी

◊ हरिमोहन शर्मा

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उन्यासों को अनेक धाराओं में बाँट कर देखा गया है। स्वतंत्रता के तुरंत बाद का हिंदी उपन्यास जहाँ मनोविश्लेषणवाद से प्रभावित है वहीं उसमें प्रयोगशीलता भी उपस्थित है। उदाहरण के लिए जैनेन्द्र, अज्ञेय और इलाचंद्र जोशी के उपन्यास मनोविश्लेषण से युक्त हैं तो धर्मवीर भारती, देवराज आदि के उपन्यास प्रयोगशील परंपरा को आगे बढ़ाते हैं। समाजवादी विचारधारा से जुड़कर यशपाल, भगवतीचरण वर्मा, उपेन्द्रनाथ अश्क प्रेमचंद की यथार्थवादी परंपरा को आगे बढ़ाते हैं तो दूसरी और ऐतिहासिक उपन्यासों में तथ्य और कल्पना के रचनात्मक संयोजन के द्वारा वृंदावनलाल वर्मा, हजारीप्रसाद द्विवेदी, रांगेय राघव आदि इतिहास और कल्पना के गठजोड़ से स्वातंत्र्योत्तर उपन्यासों की नई धारा को गतिशीलता प्रदान करते हैं। नागार्जुन, फणीश्वरनाथ रेणु, भैरवप्रसाद गुप्त आंचलिक उपन्यासों की धारा प्रवाहित करते हैं जिनमें ग्रामीण अंचल का जीवन और समाज अपने संश्लिष्ट और गत्यात्मक रूप में विद्यमान है। ग्रामांचल को आधार बनाकर राही मासूम 'रज़ा', शिवप्रसाद सिंह, रामदरश मिश्र भी अपने–अपने अंचलों की समस्याओं, अभावों और विसंगतियों को अभिव्यक्ति प्रदान करते हैं।

सातवें–आठवें दशक के बाद हिंदी उपन्यासों में कथ्य और शिल्प दोनों दृष्टियों से गुणात्मक परिवर्तन दिखाई देता है। इस समय का उपन्यास देश–काल की विपुल समस्याओं, प्रश्नाकुलताओं, चुनौतियों, विसंगति–विद्रूपताओं से युक्त है। कृष्णा सोबती, राजेन्द्र यादव, भीष्म साहनी, कमलेश्वर, मन्नू भंडारी, निर्मल वर्मा आदि अनेक उपन्यासकार अपने आस–पास के भोगे हुए जीवन–यथार्थ को नये–मुहावरे में अभिव्यक्त करने का प्रयास करते हैं। यह नया मुहावरा भारत का नया उभरता मध्यवर्ग और उसके अन्तर्द्वंद से पैदा होता है। इस समय भारतीय समाज क्रमशः नगरोन्मुख होता जाता है और नोकरीपेशा मध्यवर्ग की समस्याओं, चुनौतियों और स्थितियों को अपनी रचनाओं में प्रभावशाली ढंग से उकेरता है। सामाजिक–आर्थिक विषमता, राजनीति की विद्रूषता, मूल्यहीनता और भ्रष्टाचार को लेकर कुछ महत्त्वपूर्ण उपन्यास प्रकाशित होते हैं जिनमें श्रीलाल शुक्ल का 'राग दरबारी' महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। इधर अतियथार्थवादी शैली में लिखे गये विनोदकुमार शुक्ल, उदय प्रकाश आदि के उपन्यास भी महत्त्वपूर्ण हैं। यशपाल और भीष्म साहनी समाजवादी धारा को आगे बढ़ाते हुए अपनी कहानियाँ और उपन्यास लिखते हैं। इनमें उन्होंने मध्यवर्ग की भूमिका को अपनी रचनाशीलता का केंद्र–बिंदु बनाया है।

उपन्यासकार के रूप में भीष्म साहनी अपने समय का इतिहास कहते हुए भी सजीव यथार्थ चित्रण करते हैं जिनमें अपने समय की भरी–पूरी संश्लिष्ट तसवीर उभरती है। कुछ आलोचकों ने इनके उपन्यासों को अपने

समय का इतिहास लेखन कहा है। प्रसिद्ध कथाकार रमेश उपाध्याय का मत है– '''झरोखे'' में उन्होंने अपने बचपन से युवा होने तक का निजी इतिहास लिखा है, तो 'कड़ियाँ' में मध्यवर्गीय जवीन–व्यवहार और परिवार में आने वाले परिवर्तनों का इतिहास। 'बसन्ती' में एक बढ़ते–फैलते महानगर में बसते–उजड़ते लोगों का इतिहास है तो 'मय्यादास की माड़ी' में सामंती युग के कस्बे का पूँजीवादी युग के शहर में बदलने का इतिहास। 'कुन्तो' में परिवार, समाज और देश में हो रहे परिवर्तनों के बीच बदलते स्त्री–जीवन का इतिहास है, तो 'नीलू–नीलिमा नीलोफर' में हिंदू मुस्लिम समुदायों के बीच बनते प्रेम और घृणा के नये संबंधों का इतिहास। और उनका प्रसिद्ध उपन्यास 'तमस' तो आजादी और बँटवारे के ठीक पहले हुए सांप्रदायिक दंगों का इतिहास है ही।'' (भीष्म साहनीः रमेश उपाध्याय, पृ. 47) यह लंबा कथन सत्य का अंश रखते हुए भी भीष्म साहनी के उपन्यासों का सरल आकलन अधिक है। भीष्म साहनी ने आधुनिक जीवन के अनेक खंड–चित्रों को उपस्थित करते हुए कुछ उपन्यास लिखे हैं जिन्हें सामाजिक–राजनीतिक उपन्यास कहना अधिक उचित होगा। प्रत्येक उपन्यासकार अपने जीवन से कुछ वास्तविक घटनाओं, चरित्रों के साथ कल्पना का मिश्रण करते हुए एक आवयविक कथा का निर्माण करता है और उसे विश्वसनीय रूप प्रदान कर देता है। यह ठीक है कि उनके प्रारंभिक उपन्यास 'झरोखे' और 'कड़ियाँ' आत्म कथात्मक हैं पर वे आत्मकथा के ढाँचे को तोड़ते भी हैं। इन दोनों उपन्यासों में भले ही अपने आसपास का परिवेश चित्रित हुआ है परंतु यहाँ विभिन्न स्तरों पर उभर रहे भारतीय मध्यवर्ग का ऐतिहासिक दस्तावेज उद्घाटित हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है कि कथाकार उस परिवेश को बेहद करीब से जानते और समझते हैं। दरअसल महत्त्वपूर्ण यह नहीं कि आप किस परिवेश की कथा उठाते हैं बल्कि महत्त्वपूर्ण यह है कि आप कितनी आत्मीयता और तल्लीनता से उसे अनुप्राणित कर देते हैं। इन दोनों उपन्यासों में भीष्म साहनी ने अपने जाने पहचाने परिवेश से कथानक उठाकर अपने समाज के अंतर्विरोधों, असंगतियों और पतनशील प्रवृत्तियों को सामने ला दिया है। यह एक प्रकार से समाज और परिवार में आते हुए परिवर्तनों को रेखांकित करने वाले उपन्यास हैं।

'बसन्ती' इनका पहला महत्त्वपूर्ण और प्रभावशाली उपन्यास जो शहर में नए उभरते निम्नवर्ग की कहानी कहता है। इसमें हमारे समय और समाज की स्त्री–संघर्ष की कहानी है जो गरीबी के साथ–साथ निरंतर विस्थापन की मार भी झेलती है। कुछ विद्वानों ने इसे निम्नवर्ग की स्त्री को केन्द्र में रखकर लिखा गया सशक्त उपन्यास भी कहा है। इस उपन्यास में निम्नवर्ग की पात्र बसन्ती के जीवन की मार्मिक कहानी कही गयी है जो अनेक स्तरों पर संघर्ष करती है। वह अपने पिता द्वारा बुलाकी दर्जी को बेच दिये जाने के बावजूद अपने प्रेमी दीनू को नहीं भूल पाती। भले ही बुलाकी दर्जी उसे बड़े लाड़–प्यार से रखता है, अच्छा खिलाता पिलाता है। परंतु वह उसके साथ न रहकर उसी कॉलोनी में दूसरों के घरों में काम करके अपना जीवन–यापन कर लेती है। वह दीनू के परिवार को भी पालने की कोशिश करती है। इसके लिए वह दीनू के साथ मिलकर ढाबा चलाती है पर एक दिन दीनू उसे छोड़कर अपने गाँव चला जाता है। वह अकेली रह जाती है। उधर पुलिस वाले रेहड़ी–पटरी वालों को

भगाने के क्रम में उसका ढाबा तोड़ जाते हैं। बसन्ती एक बार फिर विस्थापित हो जाती है। पर वह हार नहीं मानती। इसप्रकार बसंती के रूप में भीष्म जी एक जीवन्त और सशक्त पात्र का निर्माण करते हैं जो मानवीयता का सच्चा रूप प्रस्तुत करती है। इस प्रकार 'कुंतो' उपन्यास के माध्यम से भीष्म जी स्वाधीनता से पूर्व के भारतीय समाज का आईना प्रस्तुत करते हैं जहाँ कई मध्यवर्गीय परिवारों की कथा एक साथ कही गयी है। इनके माध्यम से तत्कालीन सामाजिक संबंधों की झलक दिखाई देती है। पितृसत्तात्मक समाज के बीच स्त्री की स्थिति को दर्शाना संभ्वतः का केंद्रीय कथ्य रहा है। बाद में भीष्म जी ने 'नीलू नीलिमा नीलोफ़र' के माध्यम से हिंदू–मुस्लिम सांप्रदायिकता तथा दोनों समाजों के पितृसत्तात्मक समाज के वर्चस्व को चित्रित किया है जो प्रायः स्त्री–स्वाधीनता का विरोधी है। इस उपन्यास में नीलिमा हिंदू है तो नीलोफ़र मुस्लिम। दोनों का घरेलू नाम नीलू है। नीलिमा एक मुस्लिम युवक से प्रेम करती है तो नीलोफ़र एक हिंदू युवक से। नीलिमा के पिता उच्चमध्यवर्ग से संबंध रखने के कारण विचारों में थोड़े उदार हैं परंतु उनकी माँ यानी नीलिमा की दादी इस संबंध के विरुद्ध हैं जिस कारण उसका विवाह मुस्लिम युवक से नहीं हो पाता। भले ही बाद में वह हिंदू युवक से विवाह के बाद अपमानित और उत्पीड़ित क्यों न होती हो। नीलिमा अपने वैवाहिक जीवन को बचाने की कोशिश भी करती है पर असंभव हो जाने की स्थिति में वह अपने पिता के घर लौट आती है और क्रमशः संघर्ष करते हुए अपने जीवन को सँभालती है। इसी प्रकार मुस्लिम परिवेश में नीलोफ़र नयी शिक्षा के कारण संकीर्णता के दायरे को छोड़ते हुए हिंदू युवक से विवाह कर लेती है पर उसका रूढ़िवादी भाई उसे बहला–फुसला कर घर–परिवार में वापिस ले आता है और बंधक बना कर कहता है कि जब तक तेरा हिंदू प्रेमी मुस्लिम धर्म कबूल नहीं कर लेगा हम तुझे उसके पास नहीं जाने देंगे और उसे जिंदा नहीं छोड़ेगे। परंतु उपन्यास के अंत में नीलोफ़र अपनी माँ की सहायता से भाई की कैद से भाग निकलने में सफ़ल होती है और अपने पति के पास जा पहुँचती है। इस प्रकार यह उपन्यास हिंदू–मुस्लिम सांप्रदायिकता और पितृसत्ता से स्त्रियों के संघर्ष की जीवन्त गाथाएँ हैं जिन्हें भीष्म जी ने अंततः सुखांत बना दिया है।

भारत–विभाजन से संबंधित 'तमस' भीष्म साहनी का प्रसिद्ध उपन्यास है जिसमें अंग्रेजी राज की विभाजनकारी नीति के कारण हिंदू और मुसलमान साथ–साथ रहते हुए भी धर्म और संप्रदाय की संकीर्ण राजनीति के चलते मन से पहले ही बँट चुके हैं। इस उपन्यास को भीष्म साहनी ने भले ही अपनी स्मृतियों के आधार पर लिखा हो और कल्पनाएँ भी उसमें शामिल की हों परंतु उसकी मुख्य घटना और चरित्र वास्तविक और विश्वसनीय प्रतीत होते हैं। यह उपन्यास भारत के संश्लिष्ट इतिहास और अंग्रेजों की शासन–नीति को उजागर करता है तथा भारतीय जनों की इस कमजोरी पर प्रकाश डालता है कि वे धर्म का नाम आते ही भावावेग और उन्माद से ग्रस्त हो जाते हैं। उनमें मानवीय सद्भाव तिरोहित होने लगता है। वे आपस में लड़ने–मरने पर उतारू हो जाते हैं। ऐसी स्थिति में उदारतावादी शक्तियाँ भी निष्प्रभावी हो जाती हैं और मार–काट तथा अमानवीयता के दृश्य पाठक के मन में भय और आतंक के वातावरण को उभार देते हैं। वस्तुतः 'तमस' अधिकांश में मानवीय रिश्तों के टूटने,

मनुष्य के भीतर छिपी क्रूरता और जुगुप्सा के चित्र उपस्थित करता है। धर्म, राजनीति, साम्राज्यवाद, पितृसत्ता के कारण पुरूष का वर्चस्व सभी एक साथ बर्बर रूप में कथानक में उभर आते हैं। निहित स्वार्थ पहले दंगा भड़काते हैं और फिर सत्ता के भय से शांति अभियानों में भाग लेने लगते हैं। दरअसल यह ऐसा अंधकारपूर्ण समय है जब मनुष्य की सद्वृत्तियाँ विलुप्त हो रही हैं और अभावों में जी रही जनता क्षणिक समृद्धि के लोभ में हिंसक होकर लूट–पाट करते हुए सब कुछ तहस–नहस कर देती है। भीष्म जी ने विभाजन के दौरान हुए दंगों में स्त्रियों पर हुए शारीरिक और मानसिक अत्याचार के अनेक रूप दिखाये हैं। इसमें हिंदू और मुसलमान आदमी नही, पशु का रूप धारण कर लेता है। हालाँकि कहीं–कहीं मनुष्यता के भी प्रमाण मिलते हैं पर वे बहुत कम हैं। इस प्रकार 'तमस' हिंदू–मुस्लिम मानसिकता में गहरे बैठे अविश्वास, दूरियों को दर्शाने वाला उपन्यास है जिसे कथाकार संपूर्ण भयावहता से चित्रित कर देता है। यही इस उपन्यास को प्रभावशाली बनाता है।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि भीष्म साहनी ने अपने उपन्यासों में भारतीय समाज में नए उभरते निम्न मध्यवर्ग और मध्यवर्ग का विस्तार से चित्रण किया है। इन उपन्यासों में उनकी सहानुभूति निम्न वर्ग और स्त्रियों के प्रति अपेक्षाकृत अधिक रही है। उन्होंने अपने उपन्यासों और कहानियों के माध्यम से अनेकानेक सामाजिक संबंधों–परिस्थितियों और द्वन्द्वों को अंकित किया है जिनमें से कुछ रचनाएँ अप्रतिम बन गई हैं। स्वातंत्र्योत्तर हिंदी उपन्यासों में जीवन का खंड–सत्य ही चित्रित किया जा सकता था क्योंकि जीवन अपने विस्तार और गहराई में अनंत है, उसमें विविधता है, अनेक स्तरीयता है। इसलिए कोई भी उपन्यासकार जीवन के समग्र चित्रण का दावा नहीं कर सकता। भीष्म साहनी के कथा–साहित्य की विशिष्टता यही है कि उन्होंने जिस कथा को चुना उसे अनुभूति की पूरी तीव्रता के साथ चित्रित कर दिया है। इसीलिए कुछ कहानियों और 'तमस' के लिए स्वातंत्र्योत्तर हिंदी कथा–साहित्य में भीष्म जी का नाम सदा स्मरणीय रहेगा।

संदर्भ

1. हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र, हरदयाल, मयूर पेपरबैक्स, ए–95, सैक्टर–5, नौएडा, 2009
2. भीष्म साहनी–रमेश उपाध्याय, साहित्य अकादमी, नई दिल्ली, 2015
3. नयापथ–भीष्म साहनी जन्मशताब्दी विशेषांक, अप्रैल–सितंबर, 2015, सं. मुरली मनोहर प्रसाद सिंह, चंचल चौहान, 42 अशोक रोड़, नई दिल्ली
4. तमस एक पुनर्पाठ : सं. विनोद शाही, आधार प्रकाशन, पंचकूला (हरियाणा) 2006
5. भीष्म साहिनी के उपन्यास–तमस, कुंतो, बसंती, नीलू नीलिमा नीलोफर आदि।

****